चुप क्यों हो
कोई बात करो

अरुण शर्मा

अरुण शर्मा
दूसरा सस्करण, 1992
मूल्य : सौ रुपये मात्र

प्रकाशक
वेनगार्ड पब्लिकेशन
सूरतसिंह की कोठी, सोजती गेट
जोधपुर - 342 001
मुद्रण राजस्थान प्रिन्टर्स, सोजती गेट, जोधपुर – 342 001

CHUP KYNO HO KOI BAT KARO (Poems)
ARUN SHARMA
Price Rs. 100/- only

चाह से है चेतना

ऋग्वेद (१०, १२९, ४)

यह समर्पण उस दिल को
जो धड़कता है हमारे लिये ।

कुछ शब्द

□ कविता, विशेषकर हिन्दी कविता का संस्कार रोमानी है। रम्याद्भुत कल्पनाओं में कविता के प्रसाधन प्राचीन काल से ही रचे जाते रहे हैं। निकट काल में इस संस्कार से क्रान्तियुग के मध्याह्न में भी कविता मुक्त नहीं हो पाई है। यथार्थबोध की कविताओं में भी इस तथ्य को आसानी से लक्षित किया जा सकता है। अरुण शर्मा का यह कविता-संग्रह इसी परम्परा का एक विकास चरण है।

□ खड़ी बोली हिन्दी-कविता जिस कालखंड में प्रौढ़ता प्राप्त कर सकी उसे छायायुग कहा गया। उस युग की काव्य-वस्तु में वैयक्तिकता की प्रधानता रही तो शिल्प में "मैं शैली" की। किन्तु, विकास-क्रम में इन दोनों ही प्रवृत्तियों का इस काव्ययुग की सीमा स्वीकार कर स्वयं छायावादी कवियों ने ही 'युगान्त' किया और पूरे उस युग का 'पुनर्मूल्यांकन' भी प्रस्तुत किया। फिर भी कवियों का एक वर्ग, इसके विपरीत, रोमानी कविता-सृष्टि को विकसित करता ही चला गया। मनोरंजन प्रसादसिंह, आरसी, नवीन, नीरज आदि की कविता परम्परा समानान्तर विकास पाती ही रही। यहां तक कि प्रयोगयुग के प्रतिष्ठापक कवि अज्ञेयजी को भी छायावाद के अवशेष का कवि या नव्य छायावादी कवि कहकर सम्बोधित किया गया। अरुण शर्मा का यह कविता-संग्रह इसी परम्परा को आगे बढ़ाने वाली एक सशक्त एवं ललित कला-सृष्टि है।

□ अरुण शर्मा स्थापित कवि हैं। उनका अंग्रेजी कविता-संग्रह ख्यात है। अंग्रेजी के प्रतिष्ठित कवि हैं वे। हिन्दी में उनका यह पहला कविता-संग्रह है। भावना प्रधान एवं संवेदनात्मक ये कवितायें निश्चय ही सुन्दर हैं, अच्छी हैं ललित हैं। हिन्दी जगत इस वरिष्ठ कवि से इस ललित कविता-संग्रह के साथ ही साथ सार्थक कविता संग्रह की आकांक्षा भी रखता है। सामाजिक सरोकारों की कविताओं का एक दूसरा संग्रह शीघ्र प्रकाश पा सके, यह जनाकांक्षा है। इस संग्रह का कवि निरन्तर रचना कर्म में रत रहे, यह मेरी आकांक्षा है।

डॉ० विमल
उपाध्यक्ष
जनवादी लेखक संघ, राजस्थान

अनुक्रम

चुप क्यों हो कोई बात करो

(भाग पहला)

नाराज तो मैं
सिर्फ इस बात पर हूँ
कि एक से एक नायाब
इतने स्नेहियों के होते हुए
तुमने मुझ पर अचानक
इतना प्यार क्यों बरसा दिया
और अगर ऐसा किया भी
तो मुझे इतना क्यों नहीं पूर दिया
कि किसी और के अस्तित्व का
बोध ही शेष न रहे।

जगदीश गुप्त

चुप क्यों हो कोई बात करो

एक भूकम्प सी, चट्टानों को फोड़ जमीन की
जिद, फूट पड़ने की, और बहलाती हुई धरा का
उसे दुलार, पुचकार, बेबसी से थपथपा, फुसला
सुला परिचया भुलाने का निरन्तर प्रयास—
ठीक वैसा ही, कुछ वैसा ही है सह रही तुम्हारे उर की
धधकती आग जो दिखती नहीं है।

केवल उसके भभके ही भिजाते हैं मन
हर भभका बन जाता है एक गुम्फित प्रश्न
जिसमें तुम्हारी सीधी सी बातें भी पहेलियाँ लगती हैं
और मेरी चेष्टायें उनका हल ढूँढने से डरती हैं
कि कहीं वो हल "ईडन" का वही सेब तो नहीं फिर
जिसे हो अधीर "ईव" ने "एडम" को भी खिलाया था
और तभी उस दर्द को भी जगाया था
जो आज भी तुम्हारे और मेरे बीच
सिसकता कराह रहा है, थरथरा रहा है एक अनन्तानन्द की
टेरो कसमों के साथ।

सच मानो अब मुझे लगता है डर तुमसे नहीं खुद से ही
जब तुम कहती हो डरता हूँ तुमसे मैं—
सच बताओ क्या डरा है फूल महक से कभी।
और फिर तुम डर की बात कर सोच यूं चौंका कर
कहाँ मुझे ले जाओगी डरा कर—
तुम तो खुद ढूँढ रही, खुद को ही मुझ में खोकर!

ये चौंक-चौंक कर, ठहर-ठहर क्यों पोसती हो
चातक चाह, एक घातक चाह—

मेरे खुरदरे गालो को अपने कोमल गालो से सहलाना !
सोचा कितना खून बहेगा, सोचा है तुमने ?
हाँ ये बात दिगर है कि तुम पहनती हो
वो ही साडी बगाली जो मुझे पसन्द है
और चाहती हो रखना मेरा ध्यान
जैसे चूजे को देती है मा आहार चबा-चबा
जैसे गाती है कोई मुग्धा भाट
कि तुम आते अच्छे लगते हो, जाते कतई नही ।

नही-नही यही कही मिले थे उत्तर मुझे जब लेटे-लेटे ही
गोधूली के लावान मे, प्रतीक्षा के वितान मे
बुन कर एक एकान्त घना, अधेरे को साक्षी बना
अलसाये कटकित तन से, स्वप्निल विह्वल मन से
अगडाते तुमने मिलाया था हाथ आकुल अभिसारिका सा
भर पनीले नैनो मे चचल अभिनन्दन !

उस पारद क्षण की बोझिल मादकता मे
न जाने कहाँ खो गया डूबता-डूबता
कि सब कुछ समझते-समझते ना समझ रह गया !
आज भी उसकी सुधि मेरी साँस फुला देती है
नीदें झकझोर, उखाड देती है।
और आकुल रुआँसा हो जाता हूँ मैं
बेबस !

क्या ऐसा नही तुम्हारा दर्द जिसे जिन्दगी सा ढोती,
उसके अर्थ को खोजती कितने ही दर्दो मे खोती हो
जिसके कारण कभी भी वहाँ नही होती हो, जहाँ तुम होती हो
तभी तो जब भी मै तुम्हे देता हूँ आवाज
तुम चौक कहती हो—चुप क्यो हो कोई बात करो !

पता नहीं क्या मुझे हो रहा !

हो ही रहा था निराश उदास
कि न जाने कौन सी पा ली दीक्षा, करते प्रतीक्षा
कि उस देर सुबह की शांत चहल-पहल में
सीढ़ियां चढ़ती विकल बोझिल तुम्हारी पदचाप
न जाने कैसे पहचान गया आप ही आप—
हौले-हौले सूखी कटीली नागफणी में कमल होता।

कितनी व्यथाओं को खोना
उन बेबसी के क्षणों में बच्चों सा विकल
जब तुम्हारे सामने आया और तुम्हें सामने पाया
तो उस आमने-सामने होने का अर्थ समझ न आया
तब हम एक दूसरे की कन्दराओं के अंधकार में प्रवेश कर
एक दूसरे में खोये एक दूसरे को ढूंढने को तत्पर
कितने घबरा रहे थे तुम्हें याद होगा और ये भी होगा याद
कि मैं चौंका था औचक जब मेरे धधकते परस ने
एक पिघलती हिमशिला की सघन शीतलता में प्रवेश कर
एक ज्वालामुखी को उसकी तन्द्रा से जगा दिया था
और तुम्हारी कोमल कांपती बांहों में
उसकी धू-धू करती विकराल लपटों में
स्वयं को स्वाह किया था।

अपनी उस राख मे
किसी मसीहा का आशीष सा मिला था
तुम्हारा श्यामल चमकता बाल एक
जिसे छू मैं पूर्ण से पुन सम्पूर्ण हुआ था।

इसके उत्सव मे जब तुम्हारे पास आया
तो तुम्हे
एक सुदूर स्वप्न की तरह
बहुत दूर खडे पाया
जिसे देखा तो जा सकता है पर छूआ नही जा सकता।

सम्बन्धो की
उस नवीन व्याकरण मे
उस दूरत्व की परिभाषा मे
घटियो सी आई थी कही
विकल तुम्हारी
चचल आवाज-

पता नही क्या मुझे हो रहा
भस्म हो जाऊगी
अगर जरा भी
पास जो आई
तनिक तुम्हारे।

तुम्हारी ऊंचाइयां नापता

तुम्हारे अनुराग में अभिशापित
तुम्हारी प्रार्थनाओं से निष्कासित
ठिठुरती पहाड़ों की रात में
दर्रों की सांय सांय में
मैं प्रतीक्षारत रहा
एक भोर सूरज के उगने तक
सहलाता तुम्हारे दिये
वे सब घाव
जो दूखते रहे
फूल में, पत्तों में
महक में, सपनों में
वो सब परस
तुम्हारी दीठ के
तुम्हारे लबों के
तुम्हारी साँसों के
तुम्हारी बांहों के
जिनके आधार पर
गीत रच ले ही रहा था कि. . . .

मेरे सुख को सबने बाँटा
पर दुःख को सौंधा तुमने दिया
हर धूप में छाया बन बैठी
मेरी पीड़ा को मेरे साथ जिया

कि . कि . कि फिर तभी
एक ओर साय-साय चीखती दौड पडी
छीनती मुझसे भ्रूण उस गीत का
जिसमे सच था हमारी प्रीत का
हमारे रुधिर से रची कल्पना जिसकी
अभी सूखी भी नही थी
कि एक और हत्या की
तैयारियाँ जैसे शुरू हो गई थी

और मैं ठिठुरता
ठिठुरती पहाडियो की रात मे
दर्रों की साय-साय मे
प्रतीक्षारत रहा
एक और सूरज के उगने तक
निज को
तिल-तिल बिखरने से सँभालता
तुम्हारी गहराइयो मे डूबता
तुम्हारी ऊचाइयाँ नापता।

सदा निराश होने के लिये

तुम्हारे जाने का समय
शनै शनै आता रहा
जैसे-जैसे निकट
व्याकुलता मेरी
होती रही असह्य
स्थिति हो गई ऐसी विकट
हर घनघनाहट पर फोन की
विद्युत सा हाथ बढ़ता
सदा निराश होने के लिये
कि हर बार वो फोन
तुम्हारा ही नहीं होता ।

तुम क्या सोच सकती हो
क्या हो रही थी हालत मेरी
कि एक अबूझ पीड़ा
व्यक्त नहीं करने दे रही थी
तुमसे बिछुड़ने की पीड़ा

श्रौर मैं रो भी नहीं सका था
ये जानते हुए भी
कि लुट रहा है मेरा
सब कुछ–
जीवन
सपने
थाती।

उफ्
तुम जाते जाते
एक बार
सिर्फ एक बार
बस आ जाती
या फोन पर
कम से कम
विदा ही कह जाती।

विकलता तुम्हारी

फोन रखते ही
तुमसे
बात
करने के बाद
फिर बजी
घनघनाती
बेचैन माँ
फोन की घंटी
और मेरे "हैलो" पर
हौले से
आया था तैरता
नन्हा सा
एक उच्छ्वास्
गीतमय
मादक प्रीत में
ओत प्रोत
जिसकी
श्रुति
काँपती
छुपा न सकी थी
विकलता तुम्हारी
मौन।

बिन कुछ भी कहे

तुम्हारे जाने के बाद
सिर्फ एक ही काम
मैंने निष्ठा से किया है
तुम्हारे पत्रों को
बार-बार पढा है ।

एक बात
तुम्हे शायद
हो याद
फिर भी उसे
दोहरा रहा हूँ
यहा कि
तुमने लिखा था
ये भी कही कि
इतना मे जरूर जानती हूँ
कि मैंने आपसे
इतना प्यार क्यो किया
बस फर्क इतना ही है
आपमे मुझमे कि
आप बयान कर सकते है
और मै नही ।

क्या ये सच है ?
नही, नही, कतई नही ।

जहां तुम
एक परस में
एक दीठ में
एक मुस्कान में
कितना कुछ
कह गई।

आर्द्र आंखों से
निढाल विकल
सर्द होती
जर्द देह में
कितनी पीड़ा
सह गई,
मुँदी पलकों के
स्वप्निल सागर में
मुक्त मत्स्य सा
बह गई।

अर्थात्
कितना कुछ कह कर
कितना कुछ सह कर
बिन कुछ भी कहे
कितना कुछ कह गई
कि मेरी भाषा
सदा की तरह
एक बार फिर
कितनी अधूरी
कितनी पंगु रह गई।

तुम घर में नही हो

कितने ही कारणों से
कितनी ही बार
तुम्हारे कमरे मे गया हूँ
हार, लाचार
भली प्रकार जानते हुए
कि तुम घर मे नही हो
कभी की चली गई हो।

कितनी ही बार
कमरे के
निपट अकेलेपन के
बीचो बीच हो खडे
उस उदासी को भोगा है
तुम्हारी कमी के दर्द को
किस विवशता से सहा है
और हर बार
अपने आप से कहा है
कि अब कभी नही
तुम्हारे सूने कमरे मे
उसके उदास अकेलेपन मे
तुम्हे ढूँढने
कभी नही जाऊँगा

स्वयं को और नहीं सताऊँगा
और फिर हाँ और फिर
सारे प्रणों के बाद
कितना हो अधीर
फिर, फिर
पाता हूँ स्वयं को
तुम्हें ढूंढ़ता
भली प्रकार जानते हुए
कि तुम घर में नहीं हो
कभी की चली गई हो
शायद
ये भी एक तरीका है
तुम्हारे सान्निध्य को
जीने का।

नेह राग

एक राग रचें हम प्यार-प्यार
जिसकी ईक्षा हो प्यार-प्यार
गत का आरोह हो प्यार-प्यार
गत का अवरोह हो प्यार-प्यार

प्यार अलाप हो गमक प्यार हो
यादों की हो मींड प्यार
तान-तान हो प्यार-प्यार
जोड़ प्यार हो झाला प्यार

काल प्यार हो ताल प्यार हो
हर मौसम हो प्यार-प्यार
बांसी वीणा सरोद सितार
जो भी हो प्यार-प्यार

झंकारों में हो प्यार-प्यार
पलटे खटके सब प्यार-प्यार
हर मुखड़ा बस प्यार-प्यार
हर सम हो केवल प्यार-प्यार

मैं प्यार कर रहा कब से तुझे !

रात को चिथड़े-चिथड़े ओढ़े
मैं प्यार कर रहा कब से तुझे
जंगल की ठिठुरती ठिठुरन में
मैं प्यार कर रहा कब से तुझे

शैलों के पत्थर सन्नाटों में
मैं प्यार कर रहा कब से तुझे
सड़कों के निर्जन घायल करता
मैं प्यार कर रहा कब से तुझे

दर्दों का घोटता दम हर पल
मैं प्यार कर रहा कब से तुझे
गीतों की बाहों में बाहें डाल
मैं प्यार कर रहा कब से तुझे

चांद पे लिख लिख नाम तेरा
मैं प्यार कर रहा कब से तुझे
सिखा हवा को नाम तेरा
मैं प्यार कर रहा कब से तुझे

तन्हाई की आग में जलता
मैं प्यार कर रहा कब से तुझे
तेरे उत्सव के सपने सजा
मैं प्यार कर रहा कब से तुझे

हाइकू – 1

मालकौस मे बहता सितार
भीगे नैनो मे तुम्हारे
तैरता प्यार

सोचो

सोचो
मैं तुम्हारे ललाट पर अधरों से
सूरज उगा रहा
और तुम उसे चाँद बना
अपनी आँखों में मूँद, छुपा
रातों को रुपहला बना रही।

गाओ
मैं अपने अन्तर के ज्वालामुखी
तुम्हारी साँसों में भर रहा
और तुम उन्हें गीत बना
अपने कोमल अधरों में लगा
रातों को मधुर बना रही।

नाचो
मैं अग्नि परस से तुम्हारे सीमंत में
ऊषा की लाली भर रहा
और तुम उसे गुलाब बन बना
अपने अंग-अंग में खिला
रातों को महका सजा रही।

हाइकू – 2

मेरा खून तुम्हारा आंचल
नीलाभ निशा मे
गुलाबो का लास ।

तुमने जाने क्या कर दिया

एक राजकुमारी ने
कुकुरमुत्ते के छत्ते के
नीचे छिपे
एक मेंढक को
जब चूमा
तो वो राजकुमार बन गया।

चांद के हँसिये को
कूद पार कर
जब एक खरगोश
एक सुरबाला के
आंचल में छिपा
तो वो देवता बन गया।

मेरे साथ
तुमने जाने क्या कर दिया
कि आह्लादित्
सोफिया की नन् पूछती है सदा
मैं सोलह वर्ष का किशोर
कैसे बन गया ?

हर प्रीत जिसे चाहा मैंने

हर प्रीत जिसे चाहा मैंने
वो रूप तेरा ले के आई,
हर चित्र जो सपनों में उभरा
सब में तेरी छवि सुधराई।

कविताओं की कोमलता में
तेरी कोमलता शर्माई,
गजलें अपनी मादकता में
तेरी मादकता भर लाई।

सूनी साँझें सूनी रातें
तड़पी ले तेरी तन्हाई
रहे पूछते दिन आकुल
कैसी ये जान पे बन आई?

क्या तेरी मंजुल खामोशी में
पड़ता है मेरा मौन सुनाई।
गर सच है तो फिर क्यों मेरी
प्रतिध्वनि तन्हा सी लौट आई?

वाक्पटु अधरों की मुस्काँ,
वाचाल है तेरी अंगड़ाई,
नेह व्याकरण आँखों में पूर
फिर क्यों न तेरी पाती आई?

हाइकू 3

दो दुश्मन
बैठे हैं साथ
मेरी नींद तुम्हारी याद।

हाइकू 4

नींद से बोझिल पांख
प्रवासी हंसों के
श्रान्त पांख ।

हाइकू 5

बाहर हवा शांत
भीतर सन्नाटा
किसने किसका दर्द बांटा।

और मैं तुम्हे प्यार करता हूँ

भोर की सोनाली किरणे ओस मे डूब जाती हैं
तुम्हारी बनाई चाय चुस्कियाँ जगाती है
और मैं तुम्हे प्यार करता हूँ।

ढाक के वनो मे किरण चिलचिलाती है
तुम्हारी आखे मेरी दीठ छीन ले जाती है
और मैं तुम्हे प्यार करता हूँ।

तितलियाँ गुलाबो पर बेचैन फडफडाती हैं
मेरी धडकन तुम्हारे अधरावन मे कसमसाती है
और मैं तुम्हे प्यार करता हूँ।

कल भूल से कमल बाहो मे भर लिये
तुम्हारे उर की चिडिया सी कोमलता गुदगुदाती है
और मैं तुम्हे प्यार करता हूँ।

वन प्रान्तर मे वनफूल खिलखिलाते है
जगल के कोने-कोने से तुम्हारी आवाज आती है
और मैं तुम्हे प्यार करता हूँ।

पहाड़ी राहों में बर्फीली हवायें मुझे जकड़ती हैं
तुम्हारे पामों के सूरज मुझे बांहों में भर लेते हैं
और मैं तुम्हें प्यार करता हूँ।

कार "हाइ वे" पर हवा से बातें करती है
तुम्हारा आंचल चश्मे से उलझ जाता है
और मैं तुम्हें प्यार करता हूँ।

सिहर जाती है साँस के परस से झील
तुम्हारे बालों में पसरी रात अंगड़ाती है
और मैं तुम्हें प्यार करता हूँ।

तुम्हे याद करता पाता हूँ

जब बिथोवन की
सुनता हूँ सातवी सिम्फनी,
जब यहूदी मेनुहिन और रविशकर की
सुनता हूँ जु गल-बन्दी,
जब गोगा की देखता हूं छवि
आम के साथ औरतो की,
जब जगजीत की आवाज मे
गजल होती है, बशीर बदर की,
जब "हार्ट अटैक' के मरीज को
मौत के मुँह से बचाने को लडता हूँ लडाई,
जब जहा के लिये निकल स्कूटर पर
वहा न पहुँच
उससे भी आगे कही और निकल जाता हूँ,
और जब कुछ और गाने की सोच
कुछ और गाता हूँ
कि यहाँ तक कि
"हेडली चेज" भी पढ नही पाता हूँ
सपने सजाने के बावजूद भी
नीदो मे खो नही पाता हूँ
अर्थात् बहुत कुछ करने की सोच
जब कुछ भी नही कर पाता हूँ
तब मैं स्वय को
तुम्हे याद करता पाता हूँ।

हाइकू 6

नींद में आँसुओं से
तकिया भीगा
प्यार में इतना दर्द क्यों ?

कल ऐसा न हो

तुम आई
अदीक्षित, स्वैच्छिक
देहरी पर
मेरे अंतःकरण के
एकान्त मे
बिन परवाह किये
उस तूफान की
जो रातो के अधकार में
हमे डराता रहा
धमकाता रहा।

आओ
आओ
यहाँ
पास बैठ जाओ
मेरे सीने पर
सर अपना धर
मेरी बातें सुनती जाओ
वो बाते जिनमे कितना कुछ
छुपा हुआ है मेरा कितना अबूझ
उन सारी कहानियों का

जिनमें है मेरे
सुख, दुःख और उद्वेग
जिनमें हैं मेरे
करुण विषाद
तिक्त कुण्ठा
बच्चों सी कल्पनायें
और न जाने कितने
स्वप्न।

मैं जानता हूँ
तुम सुनोगी
चुप ध्यानमग्न श्रद्धा से
एक आश्चर्यजनक दाह ले
जगमगाती प्रशंसा में
तिलमिलाती सहानुभूति संग।

कल ऐसा न हो
कि यूं स्वयं को
कर अनावृत्त, अरक्षित
सामने तुम्हारे
करता रहूँ घृणा
तुमसे, खुद से
और उस क्षण में
जब सहज कह दूंगा
तुम से सब कुछ
जो कह न सका मैं
कभी खुद से।

•

दूध मुँहे सा

दूध मुँहे सा
प्यार
हमारा–
निपल चबाते
चूसते, पीते
बहाई
दूध संग
रक्त की
धारा ।

मेरा नशा

मैं एक सम्मोह के शिकंजे मे हूँ
कान मेरे चिपके है फोन मे
(वास्तव मे जो खराब भी हो सकता है)
और मैं उसके घनघनाने की प्रतीक्षा मे हूं।

मैं तुम्हारी काया की करता हूँ कल्पना
मेरे अधरो पर रची तुम्हारे अधरो की अल्पना
और खण्डहर बन अभिलाषाओं का
सुनता हूँ शंकाओं की जल्पना
और समझ नही पाता हूं कि
क्या है बदतरीन
इच्छा या प्रतिइच्छा !

दोनो ही मुझे तबाह कर रहे
स्वाह कर रहे राख कर रहे
और मैं इसका उत्सव मनाता
इस उत्सवपर्व मे विस्मित सोच रहा
कि क्या हो सकती है कोई
इससे भी कुटिल चिंता—

ये ही मेरी
    सनक है,
ये ही मेरी
    विवशता,
ये ही है
    मेरा नशा !

कोई नहीं समझेगा इसे कोई नही
औरो की तो बात ही क्या
तुम भी नहीं और मैं भी नही
कि
कैसी ये सनक
कैसी ये विवशता
कैसा ये
    नशा !

या प्रीत के हाथो ये समर्पण कैसा
केवल उसके
जो शहीद हुआ
इसकी लपटो मे धू-धू जल
जिसके अग अग तडके, भुलसे
पर पल को भी ना हुआ विकल।

कितनो के ही पास नही है साधन वो
भोगे सुख इस आग को जो
मेरी बात और है
क्या कि मेरे सपनो मे है
सहज, सरल कोमलता वो
कि जल सकूँ सहज इसकी लपटो मे

पर फिर भी है विडम्बना कैसी
मेरे जाग मे
मैं सफल हूँ
सख्त हूँ
कितना सजग हूँ
कि यही असुरक्षित करते हैं मुझे
कि तभी तो जितना होता हूँ कठोर
उतना ही द्रवित कर जाता है
वो परस ध्यान
जिसने मम् जीवन
महक बना कर
भर रखा है
निज पोर पोर को
मुट्ठी में !

लिखने से पहले हसगीत

बात दया करने की नही
ना ही दया कराने की है
मैं इतना महान् नही हूँ
कि किसी पर दया कर सकूँ
ना ही इतना दीन हूँ
कि कोई दया करे मुझ पर
नही, हम तर्क नही करेगे इस पर।

सम्बन्ध हमारा
शर्तों को बैसाखियो के
लचर आश्रित
आधार पर नही है
ये तो हमने
समर्पित किया है
पूजा के फूल-सा
एक दूजे को
और बन गये है नैवेद्य
उस पूजा के
हम दोनो ही।

ये तो मय आह्लाद है
उस पूजा से पाये अभयदान का
कि निर्भीक मांगता हूँ तुमसे
वो सब जो खुद को भी तुमने
न कभी दिया न खुद से लिया।

भयभीत विकल अनवरत
मैं हूँ प्रतीक्षारत
प्रार्थना के मौन में
वृथा तुम्हारे होन में
कि कभी तुम अपरिचित बन
पूछ बैठो न मुझसे
हूँ कौन मैं।

हमारे प्यार का यूं
कभी भी कैसा भी
कहीं भी कोई भी
लिखने से पहले हंसगीत
तुम ये अवश्य निभाना रीत
कि कर देना मेरा वध
अपने हाथों से
क्योंकि
सुन न पायेंगे वो हंसगीत
मेरे कान,
सह न पायेंगे उस गीत का दर्द
मेरे प्राण,
मेरी आत्मा को फिर न मिलेगा
कोई त्राण।

बसंत बन मिलते रहेंगे

अपनी अपनी बगलें झांकते एक दूसरे का मर्म आंकते
जब हम होंगे अधिर वो पल आयेगा एक बार फिर
जब हम आकुल झिझकते लिये दो दिल तड़पते बेचैन धड़कते
एक दूसरे के सामने एक बार होंगे फिर
कितना कुछ कहने की सोच
कुछ न कह पाने की विवशता ढोये
एक दूसरे के सामने
एक दूसरे से दूर
एक दूसरे में खोये
ये सोचते कि कैसे कहें
उन सपनों के बारे में
रातें जिन्होंने
परियों का देश बना दी,
कैसे कहें
उस दर्द के बारे में
जिसने
हर पीड़ा सहनी सिखा दी
कैसे कहें
उस विकलता के बारे में
जिसने
हर बेचैनी गौण बना दी
कैसे कहें
उस गीत के बारे में
जिसने
भूली रागें याद दिला दी।

और यूँ सोचते खुद की बेबसी को कचोटते
एक दूसरे को व्याकुल ताकते एक दूसरे का मर्म झांकते
अपनी अपनी बगलें झांकते
कुछ कह न पाने की विवशता ढोये
एक दूसरे के सामने एक दूसरे से दूर
एक दूसरे में खोये
मौन हम
कहते रहेंगे
सुनते रहेंगे
बिन कुछ कहे
बिन कुछ सुने
उस ठण्डी आग में जलते
मिलते रहेंगे
मिलते रहेंगे
दर्द
कितने देंगे
दर्द
कितने लेंगे
एक दूसरे के पतझड़ में
वसंत बन मिलते रहेंगे।

अंगूठे की छाप लिये

तुमने बताया था कि एक कहानी थी
प्रीत भरी त्रास की टीस भरी
जिसमे दो पात्र थे
एक का नाम था तुम्हारा, एक का नाम था मेरा
और अपनी-अपनी उलझनों के साथ
हम उस कहानी को जी रहे थे
प्रीत की एक आदि पीडा साग्रह विकल पी रहे थे
जैसे चट्टाने हर वर्षा मे प्यासी पीती है पानी
तुमने बताई थी कुछ ऐसी ही कहानी
प्रीत की त्रास की टीस भरी
जिसमें दो पात्र थे
एक का नाम था तुम्हारा, एक का नाम था मेरा।

उस कहानी के दर्द में खोया मैं ढूंढता रहा हूँ तुम्हे
कितना आकुल मन ले मैं ढूंढता रहा हूँ तुम्हे
आम्र कुंजों मे नही
कदम्ब की छाया मे नही
कजली की काया में नही
वृन्दावन की गीत गोविन्दीय
माया में नही
मैं ढूंढता रहा हूँ तुम्हे
सुधि की सूनी लम्बी सड़कों पर भटकता
उन दिनों मे जब तुमने मेरी ममतामय सेवा की थी
कितनी बातें की थी वहाँ

यहां की, वहां की सारे जहां की
और उन क्षणों में
जब हम
एक दूसरे की हथेलियां थामे
झांकते रहते थे एक दूसरे की आंखों में बच्चों से
हां, वहां
कितना आकुल मैं ढूंढता रहा हूं तुम्हें
उस कहानी से तुम्हें बाहर निकाल
ले चलने को आकुल अपने साथ-साथ
एक नई कहानी लिखने
जिसमें होंगे तो हम दोनों ही
पर उसे पढ़ेगा कोई और नहीं
हम दोनों के सिवाय।

ये नई कहानी कैसे आरम्भ की जाये ?
एक बार तो लगता है तुम मेरी सहोदर हो
और उस सुन्दर विचार में खो
मैं इसके गुदगुदे नेह में डूब जाता हूं
और स्वप्निल आंखें खोलता हूं तो पाता हूं
कि कहानी तो आरम्भ ही नहीं हुई
तो अगड़ाता एक बार फिर आगे बढ़ जाता हूं
और तब एक बार लगता है तुम मेरा गन्तव्य हो
और मैं तुम तक पहुंच पुनः खो जाता हूं
तुम में खो जाता हूं
और कहानी आरम्भ होने से पूर्व
न जाने कहां ठिठक रुक जाती है
और तब कई बार यूं लगता है
कि तुम अचानक कितनी कठोर हो गई हो
कि मैं अकेला हतप्रभ अपने घाव सहलाता हूं

स्वय से पूछता जाता हूँ
कि मैं ये कहानी क्यो लिखना चाहता हूँ ?
और क्यो चाहता हूँ कि
तुम ही उसमे मेरी एक मात्र सखा रहो ?
जिसके हृदय पर निज रक्त से अपने अँगूठे को भिगो
अपनी पहचान छाप दूँ
जिसके बाद तुम कभी
छुप न सको मुझसे कभी
क्योकि अगूठे की छाप किसी की भी
छुपाने से छुपती नही
फिर तुम चाहे किसी की भी होकर चाहे रहो कही–
हर किरण
हर महक
हर आवाज
जान जायेगी
कि मैं किसका हूँ और तुम किसकी
इसलिये अब तुम छोड दो होना विकल, उदास
त्याग ये त्रास
सोच सोच न हो निराश कि

किस किस से जोड कर नाम तुम्हारा
कितनो ने तुम्हे हैं कितना सताया ।

अब तो हमे ये कहानी लिखनी है
जिसमे केवल हम तुम होगे
एक दूसरे के हृदय पर
एक दूसरे के रक्त से भीगे
अगूठे की छाप लिये ।

शनैः शनैः में प्यार हुआ
(भाग दूसरा)

मैं विचार नहीं प्रेम हो गया हूँ
समूचा किसी समूचे मे खो गया हूँ।

भवानी प्रसाद मिश्र

हाइकू 7

खड़ी करतल से निज भय ढाँपे
न जाने क्या तुम देख रही
दर्पण में विकल सिहरती।

सुधि तुम्हारी

सुधि तुम्हारी
कितनी न्यारी
तन मे
भर गई
तुम्हारी
महक की
खुमारी।

•

दश–दश

दश–दश
नख दत दश–
जुन्हाई मे
झील गदराई
लिये नीलोत्पल
लोहित नील ।

गीत बनाया मैंने सबको

नगर के बहुगी कोलाहल को
फॉनफन्स की मोटी चिल्लपों को

"विशाला" की ग्राम्य चाय को
"कामा" के गरमी पास्ता को

कांकरिया की सौम्य परिक्रमा को
गलियों की पागल चहल पहल को

तुम्हारे प्यार की वर्णमाला में पिरो
गीत बनाया मैंने सब को।

सागर मे उठा ववाल

कोमल कोमल
मखमल मखमल
सूखे हुए शैवाल
छूए जब भी लहरो ने
रूपा सिकता पर
सागर मे उठा बवाल ।

मुझे लिया है लील

सूरज को
निगलने से पहले
सागर ने
रग बदले
लाल, पीत और नील
मेरे एक परस पर जैसे
रग बदल कर तुमने वैसे
मुझे लिया है लील !

तुम्हारे वपु की

जब जब छुआ
सिकता की बालू को
तब-तब पायी
परस-परस पर
तुम्हारे वपु की
कोमलता
गोलाइयाँ
और सघनता
तभी तो
लौट लौट कर
आता है सागर
सिकता पर।

कमाल करती हो

बात भी करती हो
तो करती हो
मेरी आँखों की
कमाल करती हो–
अरे !
ये तो
वो तो
देखती ही है
दिखता है जो
पर वो भी
जो
दिखता नही
जैसे
मेरे लिये
तुम्हारी चाह
प्यार की वो
सागर-सी थाह ।

खिंचा है तुम्हारा अक्स

सागर से तारों तक
तारों से सागर तक
क्षितिज पर
खिंचा है तुम्हारा अक्स
सागर का
उन्माद लिये
तारों की झिलमिलाहट लिये
क्षितिज-सी फैली
अकुलाहट लिये।

जीवन की अन्तिम सौगात

सागर सा
कोलाहल हो,
सिकता पर
झिलमिल
नीरव रात हो
तब कुछ और हो
तो जरूर इतना हो
कि बस टहलता
तेरा साथ हो
जीवन की बस वो हो
सुन्दर अन्तिम
सौगात हो
और फिर कुछ भी न हो
साँस भी न हो।

जड होता जा रहा हूँ

न मेरा कमरा है
न टेलीफोन का बूथ कोई
ये तो है पूरा का पूरा
टेलीफोन एक्सचेंज ही
जिसमे मैं बन्द हूँ
जो खुद बँद है।
"स्पेस शट्ल" की झोली मे
और "शट्ल" उडा जा रहा है
न जाने
किस आकाश गगा की ओर
और एक्सचेज के ओर-छोर
घटिया आकुल घनघना रही हैं
पर बेचैन उतावली हलो-हलो पर
न कोई आवाज जा रही है
बस घटियाँ आकुल घनघना रही हैं

न कोई लाइन आ रही है
न कोई लाइन जा रही है।

सारे के सारे
नम्बर हमारे
एक दूसरे के पास हैं जबकि
और हैं पूरे के पूरे सही के सही
फिर भी लाइन सारी की सारी
जमीन के ऊपर तारों की
जमीन के नीचे केबलों की
समुद्र तलों पर फाइब्रोऑप्टिक कॉर्डों की
माइक्रोवेव की तरंगों की
या तरगों की "सैट्लाइट" की
अर्थात्
अपने अपने सारे ढंगों की
लाइनें सारी की सारी
आकुल घनघनाती हैं
पर न कोई आवाज आती है
न कोई आवाज जाती है
और मैं
तुम्हारी ही नहीं
अपनी कारा में भी बन्द
चीखता हूँ चिल्लाता हूँ
हलो-हलो।
पर किसी की कोई आवाज
सुनाई पड़ती नहीं
केवल एक सन्नाटे के
जो दिन प्रतिदिन
पल प्रति-पल

होता गया है
घन से सघन
और मेरी चीखती हलो हलो
लिये ज़हन
भूकम्प सा कांपता
प्रतीक्षारत है
एक भयानक "क्रैश" की
विभीपिका की–

सकते मे श्रान्त, क्लान्त
हत्प्रभ आक्रान्त
सोच भी नही पा रहा कि
फोन उठायें
या न उठायें
कि
नम्बर मिलायें
या न मिलाये
जबकि घटियां आकुल घनघना रही है
बन्द खिडकियों के
बन्द दरवाजो के
कांच
कँपकँपा रही है
अनवरत्
और मैं तुम्हारी सुधि के
ऑक्टॉपस पाशो में जकड़ा
जड़ होता जा रहा हूँ
परत-परत।

सागर की पीड़ा को

मथि रहा हो
या रहा हो मल
कौन हुआ
सागर की
पीड़ा के लिये
विकल–
विष पीया तो
शताचीं बन गये
पीया अमृत तो
देव बन गये
विलास ही समझा
सबने
मन्थन की पीड़ा को
कोई भी तो न समझा
सागर की पीड़ा को।

शनैःशनैः मैं प्यार हुआ

सागर की
बातास को जब जब
सासो मे भर भर जीया
फिर फिर तेरी सांसों को
आह्लादित आकुल पीया।

सागर तट पर
डाब का जब जल
तृषित लबो ने जब पीया
तेरे लबो की मदिर मधुरता
आह्लादित आकुल जीया।

मछुआरो की
बस्ती के पास
लहरो मे उछली मीन के
अक्सो को जब जब देखा
तेरे नैनो की चचलता को
आह्लादित आकुल झेला।

केलो के खेतो मे
कदलीतरु को
जब जब छुआ
तेरे वपु की पाई स्निग्धता
शनैःशनैः मैं प्यार हुआ।

करता हूँ मैं प्यार तुम्हें

करता हूँ मैं प्यार तुम्हें
जैसे पानी धूप को
करता हूँ मैं प्यार तुम्हें
जैसे शिशु दूध को।

करता हूँ मैं प्यार तुम्हें
जैसे जंगल हवा को
करता हूँ मैं प्यार तुम्हें
जैसे दर्द दवा को।

करता हूँ मैं प्यार तुम्हें
जैसे तितली पराग को
करता हूँ मैं प्यार तुम्हें
जैसे शलभ आग को।

करता हूँ मैं प्यार तुम्हें
जैसे शेर आजादी को
करता हूँ मैं प्यार तुम्हें
जैसे बच्चा आबादी को।

आंख है मेरी

आँख है मेरी
जगल के गाइड-सी
जो देखती है
सुदूर किसी टहनी पर
बैठे वाज को
फैली छायाओ मे
झाडियो के झुण्ड मे
विचरते हिरणो को
दूर किसी सोते पर
बैठे केसरी की आँखो मे
चिलाचिल करती किरणो को
ऐसे ही पकड लेता हूँ
तुम्हारे आनन पर
आते-जाते
हर स्निग्ध भाव को
तुम क्यो लुकाने की
करती हो कोशिशें
मुझसे यूँ ?

नेह स्पन्दन

जब जब
मैंने पाया
स्वयं को
तेरी बाहों में
लगा मुझे
खोया हूँ अकेला
गिर जंगल की
राहों में
जहाँ निर्जन में
कितना जीवन
कितने सुखद
भय के रोचक छन
नीरवता में
नेह स्पन्दन ।

हाइकू 8

शैलोली में अभय जंगल
तुम्हारे साशों में
मेरा मंगल।

अधर तुम्हारे

लोट लोट कर
गया हूँ
बाडी मे नारियल की
बिन प्यास भी
नारियल पीने
क्योंकि
पास नही थे
अधर तुम्हारे।

नेह कुबेर

मन को लूटा
तन को लूटा
रात और दिन
हर क्षण को लूटा
कैसा तुमने
तिल-तिल मुझको
जहाँ तहाँ
कितना लूटा ?
मैं
नेह कुबेर
बन बैठा
बैठा-बैठा ।

जंगल की रात

जंगल की रात
लक्कड़ों की ग्राग
साथ बैठे ग्रामीण की
जगल की
कितनी ही बात
जो कितनी ही
ग्रब नही याद
क्योंकि
लिये थी
ग्रचियाँ साथ-साथ
तुम्हारी याद की
गुनगुनाहट
कि ग्राग का ताप
दूगुन हो गया
ग्राप ही ग्राप ।

हाइकू 9

इधर मैं सो नहीं रहा
क्योंकि उधर तुम
जाग रही हो ।

तुम जानतो हो

तुम जानती हो,
कि मैं तुम्हे
इन्तहा प्यार करता हूँ
इसमें न कोई शर्त है
न कोई पर्त है
जिनमें कुछ छुपा हो।

मैं तुम्हारे सामने
एक खुली किताब हूँ
तुम जहाँ चाहो जैसे चाहो
मुझे पढ लो।
मैं तुम्हारे प्यार मे तपा
बहता लावा हूँ
तुम जैसे चाहो जैसा चाहो
मुझे गढ लो।

युद्ध हो चाहे प्यार

तुम्हारा प्यार
यादें दे दे मुझे
रहा है
सपने निखार
और मैं
सब कुछ जीत
पूर्णत
स्वय को हार
विजयी सेनानी-सा
एकाकी
नीरव निशा मे
सोच रहा—
अब क्या ?

मानो
युद्ध हो या प्यार
प्रत्यावर्तन दोनो मे ही
असम्भव कष्टकर होता है।

मतलब की बात

तुम्हारे लिये
मेरे प्यार में
यह बात
कोई मतलब
रखती ही नहीं
कि मैं तुम्हें
भोग सकता हूँ
कि नहीं–
मैं तो
इस स्थिति से
बहुत आगे निकल गया हूँ
मैं तो
तुम्हें
हर पल जीने लग गया हूँ।

मैंने तुम्हारी आवाज को

मुझे
तुमने
जब भी
जहाँ भी
पुकारा है
मैंने
तुम्हारी
आवाज को
ठहर
सम्भल
तसल्ली से
तल्लीन हो
जी भर कर
कितना
निहारा है ?

एक दूजे की आंखों में

मैं
सिंह की
तसल्ली के साथ
किस तिक्तता मे
प्रतीक्षा कर रहा हूँ
उस क्षण को
जब
मेरी आंखो मे
तुम होगी
और तुम्हारी आंखो मे
मैं।

मेरा कवि

धीरे-धीरे
उदय हो रहा
दूर क्षितिज पर
पुन रवि

धीरे-धीरे
जगने लगी है
अकुलाती
अनजान अवि

न जाने
क्या चाहता है
मुझसे मेरा 'मैं"
और उसमे आकुल
मेरा कवि ?

हाइकू 10

पाशो मे तुम्हारा खिलखिलाना
स्वप्निल हँसी
नीदो मे बच्ची की ।

हाइकू 11

सागर मे नीम प्रशान्ति है
उर मे है कोलाहल ।

तेरे परस के ब्रोल

(भाग तीसरा)

अब तक जिन्दगी में जो कुछ था, जो कुछ है
सहर्ष स्वीकारा है
इसलिए कि जो कुछ भी मेरा है
वह तुम्हें प्यारा है।

गजानन माधव मुक्तिबोध

तेरे परस के ग्रेल

तेरी हर थाती
सम्भाले हुए
जीवन की
पूर्ण पूजा लिये
तेरे लिये
तेरे परस के
ग्रेल पढता
तुझे याद करता
केवल तेरा तू
मैं
तुझे याद करता
बनाये बहाना
जीने का
तेरी यादो को
सदा की तरह
जीये जा रहा
तेरे परस के
ग्रेल पढता
तुझे याद करता
केवल तेरा तू
मैं।

फीनिक्स की डोन भरता

द्विपा–मधराक्तो ने
पिलाई है कस्तूरी
रुई-सी बाँहों में
उढ़ाई धूप गुनगुनी
कि जी उठा है प्यार
पतझड़ की ठण्डी
राख में सोया
फीनिक्स की डोन भरता–
सच नहीं थी खबर
कि लिये होगी यूँ अजर
चिड़िया-सी जान
सागर-सी गहराई
अंतरिक्ष-सी गुंजाइश
जो सोख लेगी निचोड़
जीवन का हर एक छोर
मुक्त करती हलाहल से
अनुतप्त नैराश्य के

कि किस कदर
होता है अनुभव हल्कापन
ज्यों हट गया हो
सर से गगन भार
हाथों से हटी हो
झूलती धरा
और सहज हुआ हो सोना
बिना गोलियों के
हर रात
बस सालती है
तो है एक बात
आँख
खुलने के पहले
नींद की
टूटती खुमारी में
न पाना
तुझे पास
अपने साथ
टटोलती उँगलियों का,
जैसे
खो दिये हों
लम्बी बेहोशी के बाद
हाथ।

पूजा के बाँध टूट न जायें

रेगिस्तान को भुनसाती
लू-सी निर्दयी
हर नये चाँद की
किरणें शैशव
और जगाती हैं माँगें
जिन्होंने खाई है सौगन्ध
बचाये रखने की
तेरे कफन
जिनके गुलाबी सपने
पाँवों में अपने
छुपाये हुए हैं ये
कि उर में उमड़ता ज्वालामुखी
इन्हें निगल न जाये
विह्वल, विचलित, विरही मन की
पकड़ शिथिल न पड़ जाये
पूजा के बाँध टूट न जाये।

विरहा राग

ये विरहा राग
कब तक कसेगी
मन वीणा के तने तार
तपती सांसो से ही
गूँज उठती है
कैसी झंकार
कि कांप उठता है
हर तरफ का तार
किस कदर घबराया
कि अब टूटा हर एक तार
जिसके बाद
केवल रह जायेगा
खोल वीणा का
मरुथल का वीरान।

तेरी सांसों की महक

महत्व इस बात का नही
याद है ग्रभी कि
किस प्रकार तूने छुग्रा था प्रथम
पर ग्राकुलता इसकी है
कि क्यो जल रही है ग्राग
तेरी यादों की पहाड़ियों की चोटी पर
बताती कि तू नही पास
छलती सारे भटके पाखी
क्य गे जो ढूँढ़ रहे नीड़
बरसाती तूफानो मे
टकराते एक दूसरे मे
ग्रौर बढाते कोलाहल
सपनों की रातों मे
जहां छिपी है कितनी ही
तेरे गेशुग्रो में उलभी
भोर, रात, गोधूलि
जिनके चौंके मौन मे
विह्वल-सी भटक रही है
तेरी सांसों की महक
जिसे पकड़ने के लिये मैं
ताकता हूँ ग्रौचक
कभी इधर, कभी उधर।

बसन्त में बरसात

वसन्त मे बरसात
फैलाती आग
मन वन मे
हर बूंद साथ
धधक उठती है
अचियां और
आकाश लाल हो रहा
भान नही कि
सूर्योदय कि सूर्यास्त
हाथो से छूटती पकड समय की
भटकते वीथियो में
अनन्त व्योम की
खोजते मान सरोवर ।

मुद्रिका सुधि की

राजहंस भटकते
गुलाबी सपनों में
भुलसते
नीली गुफाओं में
उमड़ती लहरों में
ढूंढते
मीन
जिसने निगली
मुद्रिका सुधि की
याद में जिसकी
हर याद
ढूंढ रही याद को
कुछ याद करने के लिये।

काया की भाषा

तेरी काया की भाषा की
पढ रहा वर्णमाला
जैसे गिन रहा लहरें
उमडे सागर की
उच्छृङ्खलता से
असंयमित उग्र, हिंसक
प्यार करता जो धरा को
और मैं ओढे
मौन तेरा
पीछा करता
तेरे अभाव का
भूल जाऊँ तेरे दिये दर्द
सोच रहा ।

परस की ऋचायें

मेरा नाम ही नहीं
और सब कुछ भी
तो ले लिया है तूने
फिर कहाँ
रह जाता है
कैसा भी कोई ज्ञान ?
स्तनपान से लेकर
आज चिन्तन तक का,
जब हर पल मन
रत् मुखस्थ करने में
तेरे परस की ऋचायें
प्रवेश के लिये
तेरे मन्दिर में।

